तुषार धवल की कविताएं

नींद के चरखे

नींद के चरखे घिर्र घिर्र घूमते हैं
रुक रुक कर
सांस चलती है
मेरे सिरहाने बाजार रख दो

कई कई आवाजें एक साथ बुलाती हैं
नींद नहीं आती है

मेरी भुजाएं खुली हुईं
और तीर चल रहे हैं

इन शमशीरों को धर दो
छुपा कर
बाबलंद इन आवाजों को घोंट दो
रक्स करती नागिनों ने फिर पुकारा है

मेरी आवाज में भर दो ऊंची तल्खी
मुझे सबसे जुदा कर दो
मेरी नींद में भर दो पागलपन

मुझे शिखर को छूना है
तुम्हारे शिखरों को रौंद कर

ये आवाजें कुछ कहती हैं

इस खामोशी के तले
दबी फुसफुसाहट है बुलबुले हैं शोर के
ये आवाजें कुछ कहती हैं

ये हांफते हुए फेफड़े
चौकन्नी और असहज सांसें
झुंड से छूटे हिरण हैं
बहुत दूर निकल आये
यह जंगल मगर थकता नहीं है

ये सियार रोते हैं या कोई बस्ती
समझ नहीं आता
इसमें
डकार है हवा की
इसमें लाक्षागृह की धू धू आवाजें हैं

ये आवाजें कुछ कहती हैं

हर कदम
एक शिकारी है एक शिकार
कोई जिये जीते फर्क नहीं पड़ता

सूखी ग्रीस पर घिसती बॉल बियरिंग सी किरकिराती धरती
दमे में दफ्न बलगम के तालाबों से सिर निकाले हांफती है

इन्वेस्टमेण्ट बैंकर सी यह रात
दूर कहीं रोशनी के शिनाख्त बताती है

उसी की कोख से
खट्टी डकार सा सच रिस आता है
भोपाल से निकल कर हर तरफ फैल जाता है।

चुप खामोश बहुत कुछ सहती हैं
ये आवाजें कुछ कहती हैं

एक दिन

ये लोहे की छड़ों में कैद की मुद्दत
रंगीन मजबूरियों की मोहिनी मुद्राएं
कुछ तो हिसाब तय करेंगी ही

जिन्दगी के बैलेंस शीट पर कई छींटे कुछ धब्बे
कुछ भूलसुधार और कुछ
मिटाने के निशान

जीवन जहां से भी गुजरा
उन पन्नों पर खराश छोड़ गया

रौंद रगड़ कर बुझा दिये गये शब्द
अब भी वहीं हैं तमाम क्रूरताओं के बावजूद
भले ही उनके ऊपर से भड़कीले वाक्यों की कतार गुजर रही हो

चुप खामोशी में जब अकेला होता है पन्ना वे शब्द
निकल आते हैं और भरने लगते हैं उसमें प्राण

एक दिन वे शब्द पूरा का पूरा पन्ना बन जायेंगे
तैयार हो जायेंगे
कि उस पर से गुजरेगा जीवन
एक दिन।

हरियाली का चेहरा

(1)

धरती की हरित पट्टी यह
इस पट्टी के भीतर कितने घाव रिसते हैं
आंकड़े नहीं बताते

इस जगह का कोई तो नाम होगा
कोई तो दुनिया में इसकी जगह होगी
तुम्हारे नक्शे इसे भूले हुए हैं सही पर कोई तो दुनिया होगी
जिसमें यह जगह होगी, भले ही यहां कोई स्टेशन प्लेटफार्म नहीं
पंचवर्षीय योजनाएं भले ही इसे खा गयी होंगी
उच्छिष्ट सा यह जो है
इस जगह का नाम क्या है?

तत्सम नहीं तो भदेस ही सही पर कुछ तो नाम होगा
और उसकी कोई कहानी भी होगी सौ पीढ़ी पुरानी
कोई तो पत्थर सिन्दूर वाला कोई तो तना धागों वाला
कुछ तो मनोकामना कोई तो आस इसकी भी होगी
इसके भी अपने प्रेत होंगे भय होंगे कर्ज होंगे
सिर्फ खेतों में ही दरकते नहीं हैं लोग यहां

तुम्हारे प्रपंचों के हाशिये पर
अब भी सूनी उम्मीद लिये जो है
इस जगह का नाम क्या है?

(2)

ये अनंत को जाती पगडंडियां पेड़ों भरी
ये सांवले पोखरों में नहाती हरियाली
ये बिच्छू के डंक खपरैली छप्परों पर ऊंघती कद्दू की बेलें
धो पोंछ कर सुखाया गया नीला झक्क आकाश
किसानों पक्षियों की लुप्त होती नस्लें यहां रास्ता पूछती हैं

यहां बारूद की गंध अब तक नहीं पहुंची है
देखें तो

इस दृश्य में इस श्रव्य में
कहीं भी दुख नहीं है
जबकि मैं जानता हूं
अपने तल में हो रहा विलाप सतह पर नजर नहीं आता है

जिन बिन्दुओं पर छोड़ आया था जिन्हें
उन्हीं लुप्त हुए लोगों को इतने बरस बाद वहीं ढूंढता हूं
उसी रूप में
ओझल हुई छायाएं कहती हैं
समय से तटस्थ कुछ भी नहीं होता

टकटकी लगाये जो मर गंये उनकी पीड़ाएं
ताबूतों से यहां रिस आया करती हैं

सूखे खून की पपड़ियां और उदास आंखें
मिट्टी और ओस में अपनी गंध भरती हैं
अन्न के दानों में भूख की कई कहानियां होती हैं
हरियाली का चेहरा हरदम हरा नहीं होता

हम रंगीन कपड़ों से ढांप दें इस धूसर हरियाली को
हम लिख दें हर तरफ कि
झूठ है सब योजना मक्कारी हैं आंकड़े
नदी का कंठ प्यास से दरकता है
भूरे बादल तले इस नीली हवा में चिढ़ है उदासी है
एक खब्त छा रहा है हरियाली पर
धरती बगावत बुदबुदाती है।

काला कैनवास तिरछी लकीरें

वह जहां खड़ा है उस तक पहुंचने के सारे रास्ते
गिर गये हैं
और उसके चारों तरफ धुंध फैलती जा रही है
जबकि उसे खोजने मिथकों में जा रहे हैं लोग
वह एक द्वीप हो गया है
कोई भी भाषा चल कर उस तक नहीं आ सकती

अब वह अपने जैसा ही किसी को ढूंढता है
सड़क बाजार और इण्टरनेट पर।

सिर्फ इतना कि वह काले को काला कहता है, ग्रे नहीं
और काले को काला कह देने लायक कोई भाषा नहीं बची
अब वह जो भी कहता है पहेली की तरह लिया जाता है
जिसमें काले का अर्थ कुछ भी हो सकता है, काला नहीं
अपने लोगों के बीच एक द्वीप हो जाना
जीते जी लुप्त हो जाना है और ऐसे ही कितने लोग
अकेले लुप्त हुए जा रहे हैं
जबकि आंकड़े बताते हैं कि आबादी बढ़ रही है
यह किसकी आबादी है?
वह इन बेरहम फासलों से हाथ उठा उठा कर चिल्लाता है और
कुछ कहता है पर व्यस्त लोग
अपनी अपनी जुगत में उसके बगल से निकल जाते हैं

वह एक काले कैनवास पर तिरछी लकीरें खींचता है और
बताता है यह मेरा समय है
जिसकी तिरछी लकीरें कैनवास के बाहर मिल कर
नयी संरचना तैयार कर रही हैं
चित्र कैनवास के बाहर शून्य में आकार लेते हैं

उसका मन रोज एक खाईं बनाता है
जिसे वह रोज पार करता है
जगत इसकी व्याख्या में उलझा रहता है।